वेदान्त मिशन की मासिक ई - पत्रिका

वेदान्त पीयूष

वर्ष २३ अगस्त - २०२३ प्रकाशन - ०८

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

वेदान्त पीयूष

अगस्त २०२३

प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९४८, सुदामा नगर

इन्दौर - ४५२००९

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

वेदान्त पीयूष

विषय सूचि

1,	श्लोक	05
2.	पू. गुरुजी का संदेश	06
3.	वेदान्त लेख	10
4.	वाक्यवृत्ति	14
5.	गीता और मानवजीवन	20
6.	जीवन्मुक्त	25
7.	मनु और दशरथ चरित्र	29
8.	कथा	33
9.	मिशन-आश्रम समाचार	36
10.	आगामी कार्यक्रम	55
11.	इण्टरनेट समाचार	57
12	लिन्क	58

अगस्त 2023

प्रकाशोऽर्कस्य तोयस्य शैत्यमग्नेर्यथोष्णता।
स्वभावः सच्चिदानन्द नित्यनिर्मलतात्मनः॥

(श्लोक - २४)

जैसे सूर्य का स्वभाव प्रकाश स्वरूप, जल का शीतलता, और अग्नि का उष्णता आदि है। वैसे ही आत्मा स्वरूपतः सच्चिदानन्द, नित्य एवं शुद्ध स्वरूप ही हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि यह समस्त विकार बुद्धि के है, आत्मा के नहीं।

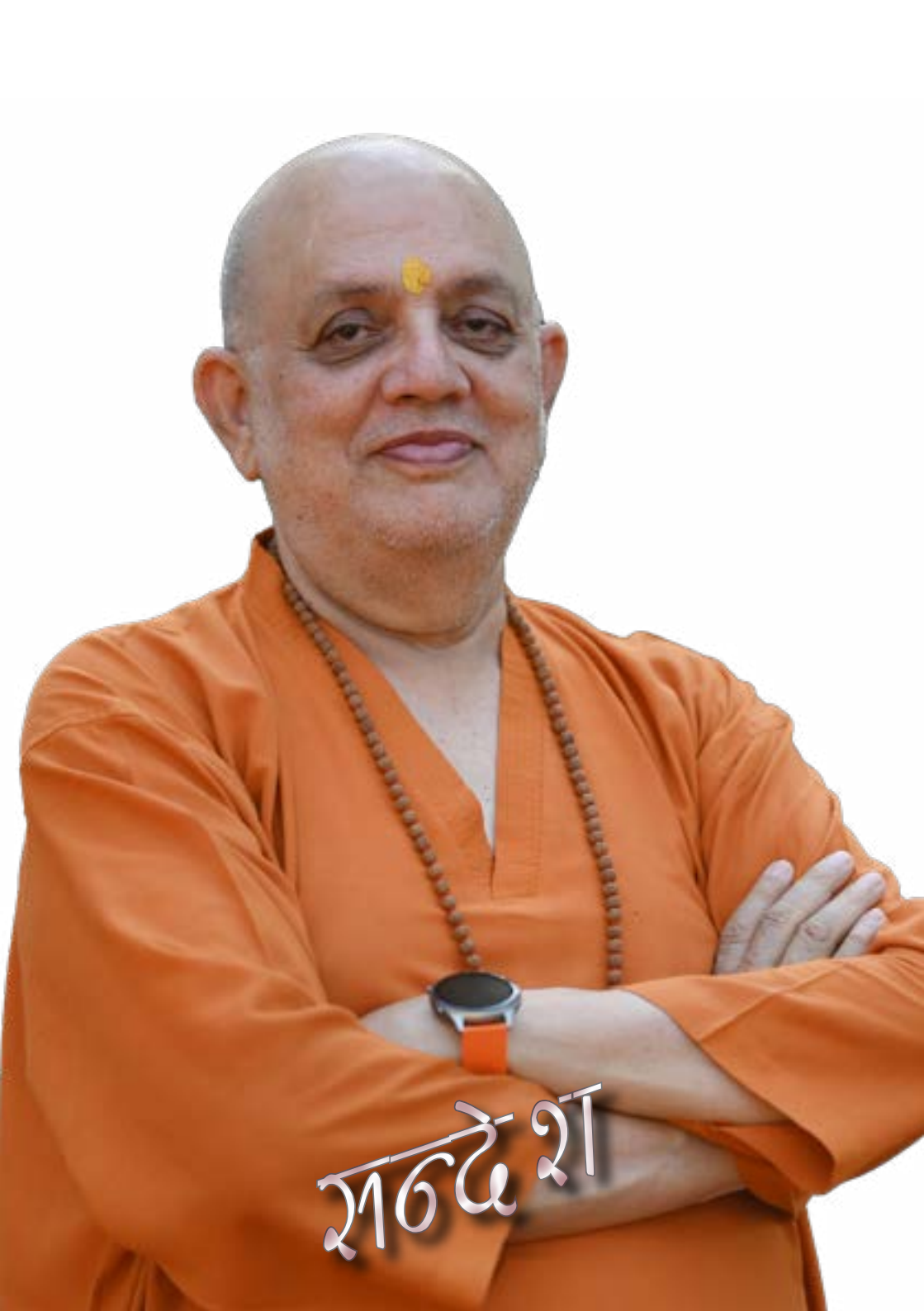
सन्देश

उपरति – स्वधर्मानुष्ठानम्

उपरति आत्मज्ञान के लिए आवश्यक सम्पत्ति की तरह बताई जाती है। इसका शाब्दिक अर्थ होता है, उप अर्थात् समीप और रति अर्थात् रमण करना। अपने आप में रमना यह उपरति है। उपरति तब ही सम्भव होती है, जब कोई अपने अन्दर धन्य व कृतार्थ होता है। अपने आपकी यथावत् स्वीकृति है, जहां परिवर्तन की कोई आकांक्षा नहीं है। ऐसी मनोस्थिति जहां प्रत्येक प्राप्त परिस्थिति में धन्यता की वृत्ति बनी हुई है। ऐसी धन्यता भगवान के प्रति श्रद्धा और भक्ति का अद्‌भुत प्रसाद होता है। जहां प्रभु से कुछ भी मांगने की अपेक्षा नहीं है। जो कुछ भी प्राप्त है, उसे प्रभु की कृपा देखा जा रहा है। परमात्मा के प्रति अत्यन्त समर्पण है, जहां स्वयं को भी परमात्मा के हाथ में निमित समझा जा रहा है। वहां मन में प्रभु की बरसती हुई कृपा देखकर कृतज्ञता की भावना है। अतः निष्क्रियता भी नहीं है, किन्तु प्रभु के द्वारा प्राप्त प्रत्येक परिस्थिति को प्रभु की आज्ञा मानकर उसकी सेवा

उपरति – स्वधर्मानुष्ठानम्

के लिए कर्म की अभिव्यक्ति है। जीवन में चिन्ता-भय आदि का नामोनिशान नहीं है। वह प्रत्येक क्षण धन्यता का जीवन जीते हैं।

एक ग्रंथ में आचार्य ने उपरति की व्याख्या करते हुए बताया कि स्वधर्म अनुष्ठानमेव। परमात्मा ने प्रत्येक जीव की विशेष प्रकृति बनाई है। उसके अनुरूप मन के अन्दर सहज प्रवृत्ति वा झुकाव होता है। उसे ही वर्ण अथवा स्वधर्म कहा जाता है। अपने स्वधर्म के अनुरूप जीना ही प्रभु के अधीन होकर, उनकी आज्ञा का पालन करके जीना है। जब कोई व्यक्ति अपने स्वधर्म को जीता है, वहां उन कर्म में कोई चेष्टा वा प्रयास नहीं लगता है। अतः कर्म के समय भी कर्म के बोझ से मुक्त रह पाता है, उसमें सहजता का आनन्द व अपने अन्दर विश्रान्ति का अनुभव करता है। कर्तापन के बोझे से रहित होने की वजह से कर्तृत्व का अभिमान भी शिथिल होता है।

ऐसी स्थिति में स्वधर्म रूप कर्म मात्र आनन्द का हेतु बन जाता है, अतः उसके लिए आनन्द की प्राप्ति की, भविष्य की कोई गणित नहीं होती है। वह कर्मफल की चिन्ता से मुक्त हो जाता है। कर्मफल के प्रति चिन्ता व आसक्ति उसे

उपरति – स्वधर्मानुष्ठानम्

भविष्य अथवा कल्पना के जगत में ले जाती है। इस प्रकार मनुष्य को अपने आपसे दूर कर देती है। जिसकी वजह से मूल्यवान वर्तमान के क्षण हाथ से फिसल जाते हैं। अन्त में भूतकाल का स्मरण करके पश्चाताप मात्र होता है। भूत और भविष्य में यात्रा ही अपने आपसे दूर जाना है। स्वधर्म के अनुष्ठान से वह अपने आपमें रमता है। जो व्यक्ति भूत की ग्लानि और भविष्य की चिन्ता से मुक्त होता है, वह ही वर्तमान में उपलब्ध वस्तु के बारे में विचार करके गहराई में जाने में समर्थ होता है। कर्मफलासक्ति से मुक्ति उसे अन्तर्मुख बनाती है। वह अपने स्वस्वरूप के बारे में गहराई से विचार करने में समर्थ हो पाता है। अतः स्वधर्म अनुष्ठान को ही उपरति बताया।

इस मूल्य को विकसित करने के लिए प्रभु की बरसती हुई कृपा को देखकर धन्यता होनी चाहिए। पूरी सृष्टि उनकी सुन्दर कृति है, तथा हम भी उनकी कृति है। इस बात को जानते हुए अपने होने मात्र में धन्यता हो तथा प्रभु ने जिस विशेष प्रकृति व सामर्थ्य से नवाजा है, उसे पहचान कर समग्रता से जीना चाहिए। जो यह करने में समर्थ होता है, वह उपरम नामक सम्पत्ति से युक्त होता है। बाहर की पराधीनता से मुक्ति का बल इसीसे प्राप्त होता है।

वेदान्त लेख
अहम् ब्रह्मास्मि

कर्म की सीमा

प्रत्येक जीव की यात्रा कर्मक्षेत्र से ही आरम्भ होती है। कर्म की अध्यात्मयात्रा में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उससे आत्मज्ञान हेतु मन को पात्र बनाया जाता है। मन की रागादि अशुद्धि की निवृत्ति होती है, मन शान्त, सूक्ष्म, विचारशील और अन्तर्मुख होता जाता है। यह कर्मक्षेत्र की सब से महान उपलब्धि है। किन्तु यह तब सम्भव होता है कि जब कर्म के पीछे अपना रवैया उचित हो, कर्म को कर्मयोग बनाकर जीएं। यही धर्मशास्त्र का भी विषय है।

ऐसी महत्वपूर्ण भूमिका होते हुए भी अधिकतर अज्ञानजनित मोह व उचित शिक्षा के अभाव में कर्मक्षेत्र को अनुकुलता की प्राप्तिमात्र का साधन समझता है। प्रतिपल यह अनुभव होता है कि ऐसा सुख प्राप्त करने पर भी प्यास ज्यों कि

कर्म की सीमा

त्यों बनी रहती है। सर्वोत्कृष्ट आनन्द प्राप्त हो जाएं तो भी धन्य व कृतार्थ होकर नहीं जीते है। उसके उपरान्त भी प्यासे भोक्तामात्र बने रहते है। आत्मज्ञान हेतु कर्मक्षेत्र की सीमा समझनी चाहिए। कर्म के द्वारा एक आदर्श व्यवस्था, स्वर्गतुल्य जीवन भी बना लें तो भी प्यास समाप्त नहीं। कर्मक्षेत्र से मुक्ति सम्भव नहीं है।

वेदान्त का ज्ञान निषेधात्मक है, जहां अपने उपर के अध्यारोप का अपवाद मात्र किया जाना है।

जो कर्मक्षेत्र व तज्जनित उपलब्धियों की सीमा समझते हुए उसे ही मूल लक्ष्य नहीं समझता, परिणामस्वरूप कर्मक्षेत्र का महत्व गौण होता जाता है। वह कर्म से संन्यस्त होता है। तब ब्रह्मज्ञान के कक्ष में प्रवेश सम्भव होता है। ऐसा मन समग्रता से पूर्णतया 'जो है' उसे समझने को उपलब्ध हो जाता है। वहां अज्ञान की विनम्रता और प्रामाणिक स्रोत से ज्ञानप्राप्ति हेतु शरणागति होती है। ऐसा साधक जब गुरु के चरणों में ज्ञान के लिए समर्पित होता है, तब गुरु उसे

कर्म की सीमा

ज्ञान के लिए पात्र जानकर वेदान्त का विधिवत् ज्ञान प्रदान करते हैं। इस ज्ञान में भी किसी विधि-निषेध का स्थान नहीं होता, अपिन्तु निषेधात्मक ज्ञान अर्थात् अपने उपर की गई कल्पना व अध्यारोप की निवृत्ति का ज्ञान दिया जाता है। जो इसके लिए उपलब्ध होता है, वही मोक्ष रूप परं पुरुषार्थ की सिद्धि करता है। ।

आदि शंकराचार्य

द्वारा

विरचित

वाक्यवृत्ति

स्वामिनी अमितानन्द

यस्य प्रसादादहमेव विष्णुः मयि-एव सर्वं परिकल्पितं च।
इत्थं विजानामि सदात्मरूपं तस्यान्घ्रि पद्मं प्रणतोऽस्मि नित्यम्।।

श्लोक – ०१

सर्गस्थितिप्रलयहेतुम्
अचिन्त्यशक्तिं
विश्वेश्वरं विदितविश्वम्
अनन्तमूर्तिम्।
निर्मुक्तबन्धनमपार
सुखाम्बुराशिम्
श्रीवल्लभं विमल
बोधघनं नमामि।।

जो जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और लय का कारण हैं, अचिन्त्य शक्ति से युक्त, विश्व के नियन्ता है, तथा जो बन्धन रहित अपार सुख के समुद्र हैं, जो माया और उसके कार्य रूप मल से रहित, ज्ञान स्वरूप हैं, उन श्रीपति को हमारा नमस्कार हैं।

वाक्यवृत्ति

वाक्यवृत्ति ग्रन्थ का आरम्भ करते हुए आचार्य मंगलाचरण करते हुए श्रीपति भगवान् विष्णु को नमस्कार करते हैं। भगवान् को नमन करने के द्वारा न केवल अपने कर्तृत्व को किनारे करके, उनके निमित्त बनकर कार्य करना है; अपितु इस कार्य तथा इसके प्रयोजन की सिद्धि हेतु उनकी कृपा का आवाहन किया जा रहा है।

श्रीवल्लभं नमामि – हम श्रीपति प्रभु श्रीविष्णु को नमस्कार करते हैं; जो सर्गस्थितिप्रलय हेतुं अर्थात् सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करनेवाले हैं। इसके लिए वे अपनी अचिन्त्यशक्तिं अर्थात् अनिर्वचनीय मायाशक्ति को धारण करते हैं। परमात्मा स्वयं सब से असंग, अविकारी स्वरूप हैं। वे सृष्टि की उत्पत्ति आदि उनकी अचिन्त्य मायाशक्ति को धारण करके करते हैं। भगवान न केवल अपनी मायाशक्ति के द्वारा सृष्टि का सृजनादि

कार्य करते हैं। सृजनकार्य करने हेतु सृष्टि के रहस्यों का ज्ञान भी होना चाहिए। जिस प्रकार घटकर्ता घटज्ञः, वैसे ही विश्व को बनानेवाले विश्वज्ञ अर्थात् **विदितविश्वम्** होने चाहिए।

अनन्तमूर्तिम् - साधारणतः घडे का निर्माता उनसे पृथक् रहता है। किन्तु अनन्तमूर्ति से आशय है कि वे स्वयं ही इन अनन्त-अनन्त रूपों में अर्थात् सृष्टि की तरह से अपनी अचिन्त्य मायाशक्ति के द्वारा अभिव्यक्त हुए हैं।

ईश्वर के प्रति श्रद्धा और भक्ति के अभाव में उनका ज्ञान आत्मसात् नहीं हो सकता है। जो इस जगत को बगैर किसी रागादि के वशीभूत हुए यथावत् देख पाता है, वह सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय की सुन्दरता का अनुभव करता है। सम्पूर्ण सृष्टि को समग्रता से देखने पर यह ज्ञात

होता है कि यह अपने आपमें पूर्ण है। अर्थात् उसमें किसी भी प्रकार की न कोई कमी है और न उसमें कुछ भी अधिक है। ऐसी सुन्दर तारतम्यता, महिमा, सुन्दरता से युक्त सृष्टि को देखकर उन सृष्टा रूप कलाकार की ही महिमा ज्ञात होती है। उन्हें देखकर मन श्रद्धा और अत्यन्त आदर से नतमस्तक हो जाता है। सर्वत्र उन सर्वज्ञ के प्रेम और करुणा की ही सृष्टि दीखती है। सर्वज्ञ की सर्वज्ञता को देखने पर अहं का विसर्जन होता जाता है और भक्ति के पुष्प खिलते जाते हैं। विश्वेश्वर, विदितविश्वम्, और अनन्तमूर्तिम् की तरह देखने के द्वारा हृदय में भक्ति का संचार होने लगता है।

अलौकिक सृष्टि की तरह अभिव्यक्त होने पर भी उनके दोषों से सर्वथा मुक्त है। उनकी अभिव्यक्ति में कोई चेष्टा या कर्तृत्व का अभिमान नहीं है। क्योंकि वे स्वयं अपार सुखसागर अर्थात् स्वयं आनन्दस्वरूप हैं। यह सृष्टि मानों उनके प्रेम और आनन्द की ही अभिव्यक्ति है। ऐसे श्री अर्थात् मायापति किन्तु माया के दोषों से सदैव मुक्त परमात्मा को नमन करता हूं। इस प्रकार इस

मंगलाचरण के माध्यम से आचार्य ने जिन परमात्मा से ऐक्य को दर्शाया जाना है, उनका परिचय प्रदान किया। इसके माध्यम से ग्रंथ का विषय और उसका प्रयोजन भी स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे परमात्मा ही इसके विषय तथा उन बन्धन से मुक्त, अपार सुखराशि परमात्मा की प्राप्ति होने पर समस्त बन्धनों से मुक्ति हो जाती है।

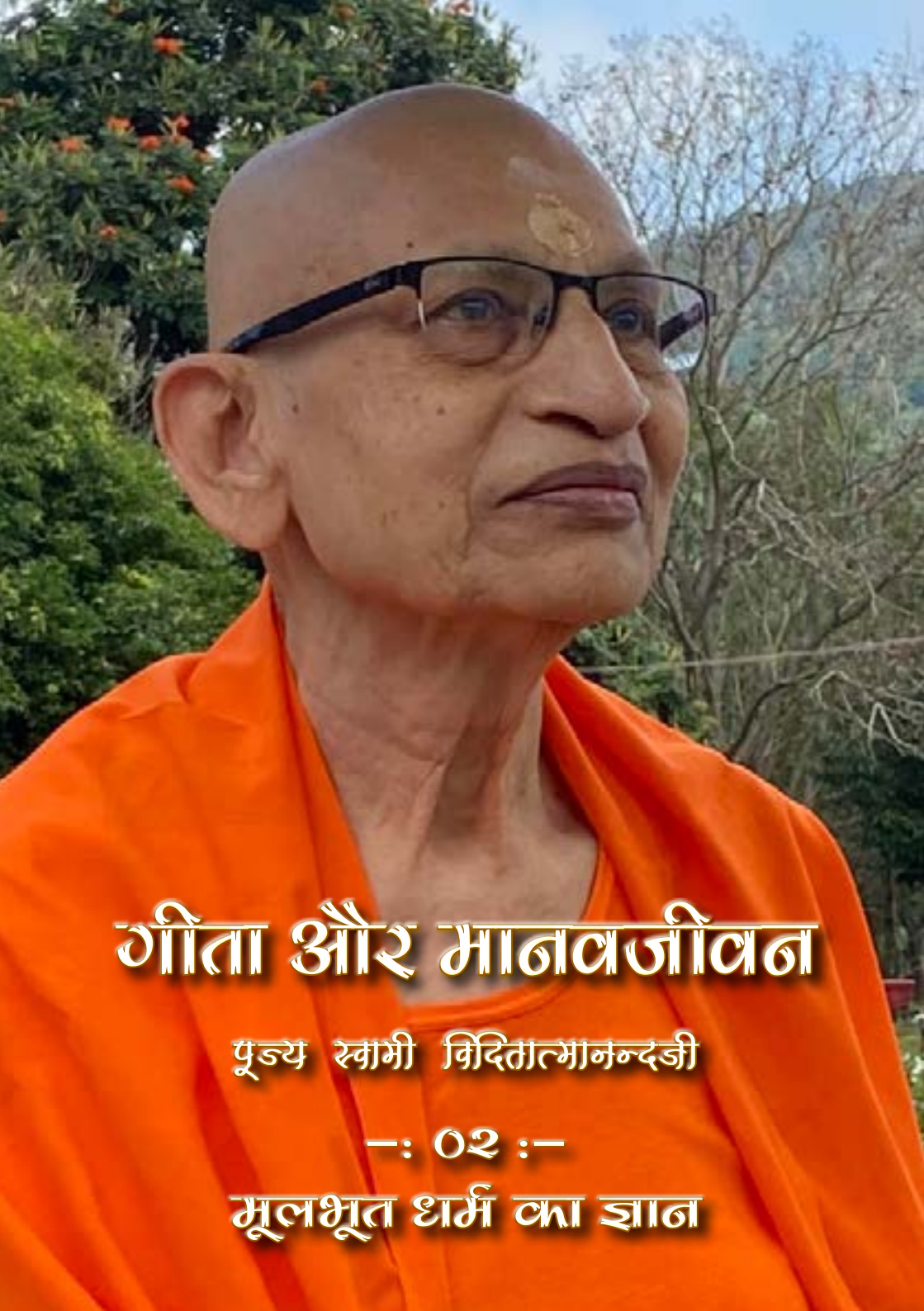

गीता और मानवजीवन

पूज्य स्वामी विदितात्मानन्दजी

–: ०२ :–

मूलभूत धर्म का ज्ञान

गीता और मानवजीवन

मानवधर्म अर्थात् जो सर्वसामान्य है, वैसे जीवन के मूलभूत मूल्य। हमारे, आपके, सब के जीवन को जो मूल्य धारण करते है, उसका नाम धर्म। इस धर्म का हमें ज्ञान है या नहीं?

मानों कि किसीको शिक्षा ही न मिली हो, तो वह अपने जीवन में मूल्यों का पालन कर सकता है या नहीं? जो लोग पाठशाला गए हो, और धर्मशास्त्र का अध्ययन किया हो, उन लोगों को ही धर्म का ज्ञान होना आवश्यक है? जो अनपढ़ है, जिसे धर्म का ज्ञान ही नहीं हो, क्या उसके जीवन में धर्म नहीं हो सकता? नहीं, ऐसा नहीं है। हम लोग जीवन के मूलभूतधर्म की बात कर रहे है, जिसका प्रत्येक व्यक्ति को सहज रूप से ज्ञान होता ही है।

गीता और मानवजीवन

हमं जीना है, जीवन के लिए मुझे स्वाभाविक प्रेम है और इसलिए मैं जानता हूं कि प्रत्ये जीवन्त व्यक्ति को या जन्तु को भी जीना है। अपने जीवन के एिल उसे स्वाभाविक प्रेम है। क्या हमें नहीं पता कि मच्छर-मख्खी को भी जीने की इच्छा है? जिस प्रकार मुझे जीवन प्रिय है वैसे ही उसे भी उसका जीवन प्रिय है। यह ज्ञान हम सबको है ही।

'तो फिर' अनेको लोग प्रश्न करते है, 'स्वामीजी! लोक आत्महत्या क्यों करते है?' इस समझने के एिल हमें अन्य एक शर्त समझनी होगी और वह यह है कि मनुष्य को जीवन तो प्रिय है, किन्तु उसे सुखसे जीना है। सुख के लिए भी प्राणी को स्वाभाविक प्रेम होता है, और इसलिए जब मनुष्य को ऐसा लगता है कि उसके जीवन में सुख की कोई आशा है ही नहीं, आशाकी कोई किरण भी उसे जीवन में नहीं है, ऐसा निर्णय उसके मन में जन्मती है तो वह अपने जीवन का अन्त करना चाहे यह सम्भव है। क्योंकि जीवन के अन्त में उसे दुःख की निवृत्ति होती दीख रही है, और इसलिए आत्महत्या करनेके लिए प्रेरित होता है। सुख नहीं भी मिले किन्तु मृत्यु से सर्व

गीता और मानवजीवन

दुःक्ष का अन्त हो जाएगा, ऐसी गलत समझ से प्रेरित होकर मनुष्य आत्महत्या करता है।

अर्थात् प्रत्येक प्राणी को जीना है और सुख से जीना है। यह बात किसीको भी हमें सीखानी नहीं पडती। इसी पर से समस्त मूल्य अहिंसा, सत्य इत्यादि रचित है। यह है मनुष्य की मूलभूत आकांक्षा जिसे ध्यान में रखकर शास्त्र मूल्यों का उपदेश करते है। यह सर्वसामान्य धर्म है। सर्व सम्प्रदाय इस सर्व सामान्य मूल्य पर ही रचित है। अहिंसा सामान्य धर्म है। क्योंकि मुझे हिंसा प्रिय नहीं है और इसलिए मैं जानता हूं कि किसीको भी मुझसे हानि पहुंचे तो उसे भी यह स्वीकार्य नहीं होगा, इसलिए अहिंसा यह स्वाभाविक धर्म बन जाता है।

और यदि मैं चाहूं कि सुख की मेरी तलाश में, सुख-प्राप्ति के मेरे प्रयासों में कोई

व्यवधान नहीं बनना चाहिए, उसी तरह अन्य भी यही चाहता है कि उसके भी उस प्रयास में कोई व्यवधान न बनें। मेरी स्वतंत्रता को कोई छिन लें यह मुझे पसंद नहीं है, इससे यह मैं जानता हूं कि अन्य की स्वतंत्रता पर भी हम आघात करे वह उसे पसंद नहीं होगा। मेरे अधकार पर कोई आघात करे यह यदि मैं स्वीकार नहीं कर सकता तो मैं जानता हूं कि अन्य के अधिकार पर मैं आघात करुं वह दूसरे को स्वीकार्य नहीं होगा। तो फिर कर्म इस प्रकर से करें कि जिससेकिसी के अधिकार पर आघात न पहुंचे, किसीकी स्वतंत्रता न छिनी जाए, किसीके सुख की खोज में व्यवधान न बनें, किसीके जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति के प्रयास में हम व्यवधानरूप न हो।

इस प्रकार मानव-धर्म अर्थात् जीवन के मूलभूत मूल्य, जिसे हम मानवता कहते हैं।

जीवन्मुक्त

— ३९ —

उत्तरकाशी

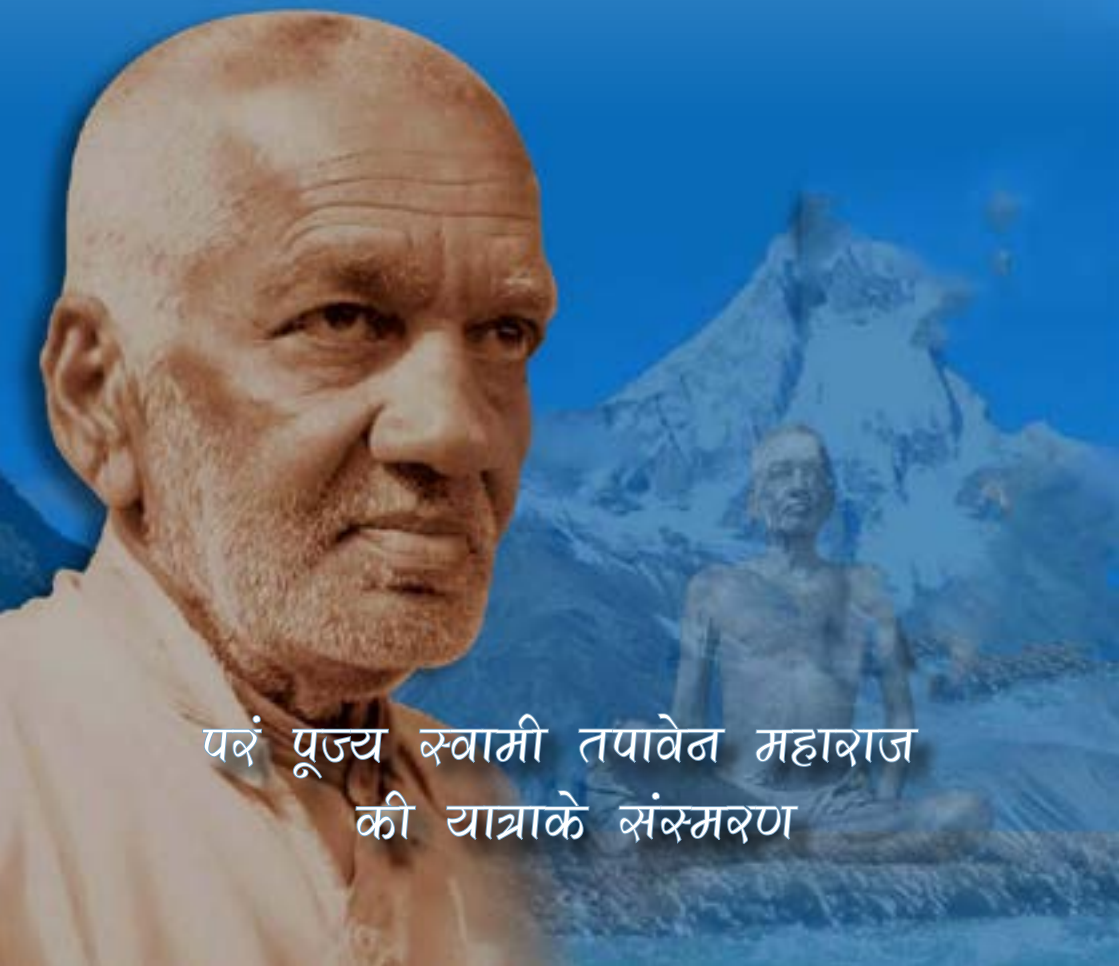

परं पूज्य स्वामी तपोवन महाराज
की यात्राके संस्मरण

जीवन्मुक्त

जरा खा पीकर हम वहा से लौट पडे। यद्यपि एक दो दिन वहां रहने की मेरी इच्छा थी, तो भी शीत की अधिकता तथा हिमपात के आरंभ का समय हो जाने के कारण वह अभिलाषा पूरी किये बिना, उदास मन के साथ मैं उस सरोवर का किनारा छोड चला आया था। एक घंटे का समय बीत गया था। हम पर्वत शिखर पर पहुच गये। पिछली रात बादल उमड घूमड कर रहे थे तो भी सवेरे जो आकाश नील निर्मल हो गया था, वह अब फिर काली घटाओं से घिर गया और सारे पहाड को हिला देनेवाला गंभीर गर्जना भी शुरू हो गया। ऐसा लगा मानो पर्जन्य देवता हम सर्व संगपरित्यागियों के साहस की परीक्षा लेना चाहता हो। वायुदेवता प्रचंडता के साथ चलने लगा, मानो इस देवभूमि

में यात्रा करने के कारण वह हम मनुष्यों पर क्रुद्ध हो उठा हो। जल नही, हिमकणों को धीरे धीरे बरसाने लगा।

मुझे यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ कि ग्रामीणों के विश्वास के अनुसार ही यह घटित हो रहा हे। हम सब ने ईश्वर से प्रार्थना की कि हमारे शरीर तथा ग्रामीणों की फसल को कोई हानि न पहुंचे। अक्टुबर महीने से ऐसे पर्वत शिखरों पर बादल अधिकतर पानी नही, ओले बरसाया करते है। नवम्बर महीने से हिम भी बरसाने लगते है। लेकिन यहा की ओलों की वर्षा और निम्न देशों की ओलों की वर्षा मे कितना बडा अंतर है। यहा ओलों के गिरते गिरते कभी कभी पहाडी चोटियों पर एक फुट तक बर्फ जम जाती है। पाषाणवर्षा के शुरू होते ही हमारे सहचारी पहाडी लोगों का सारा साहस छूट गया और वे बहुत घबराने लगे।

जीवन्मुक्त

धीरे धीरे पाषाण वर्षा खूब होने लगी। सारी भूमि हिमाच्छादित हो धवल हो गयी। बिना छतरी व जूते के स्वच्छंद रूप से सैर करने वाले हम बडी कठिनाई में पड गये। दस हजार फुट से अधिक उंचाई पर हिमवर्षा के बीच चलने के कारण हमारे हाथ पांव सिकुड़ने लगे तथा शरीर कांपने लगे। चूंकि हम सब आत्मविश्वास तथा ईश्वर विश्वास रखनेवाले थे, इसलिए इस विपत्ति में भी साहस के साथ अमंगल की प्रतीक्षा किये बिना दौडते हुए चले। वर्षा हो रही है। हिम भूमि पर जम जमकर बढता जा रहा है।

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)

श्री मनु और दशरथ चरित्र

– ०९ –

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना।
ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना।।

मनु और दशरथ चरित्र

महाराज श्री दशरथ का व्यक्तित्त्व अगणित आकर्षक गुणों से युक्त था। उनमें धर्म, ज्ञान और भक्ति का समन्वय विद्यमान था। प्रजा के प्रति उनके अन्तःकरण में प्रगाढ़ प्रेम था। महाराज श्री दशरथ वृद्धावस्था तक धार्मिक जीवन व्यतीत करते हुए भी पुत्ररहित थे। पुत्र के अभाव की चिन्ता उनके मन में वृद्धावस्था के आगमन पर ही उदित होती है। युवावस्था में एक लम्बी अवधि तक पुत्र की आवश्यकता का अनुभव न होना उसी संस्कार से सम्बद्ध है जिसका वर्णन मनु के रूप में उनकी आत्मग्लानि के इन शब्दों में किया गया है। 'होई न विषय बिराग भवन बसत भा चौथापन।' वस्तुतः विषयों के प्रति उनके मन में तीव्र आकर्षण विद्यमान था। युवावस्था में उनके अनेक विवाह होते हैं। शास्त्रीय मर्यादा और प्रचलित परम्परा की दृष्टि से बहुविवाह में कोई दोष

मनु और दशरथ चरित्र

न था। अतः इस दृष्टि से जहां वे स्मृति के अनुकूल जीवन व्यतीत कर रहे थे वही पुत्र का अभाव बहुविवाह के औचित्य को और भी तार्किकता प्रदान कर रहा था। इस तरह शास्त्रीय मर्यादा और विषय-सुख की लालसा जहां एकाकार हो रही हो वहां उनमें वर्गीकरण करना अत्यन्त कठिन है। वृद्धावस्था तक पुत्र के अभाव की चिन्ता से व्यथित न होना यही सिद्ध करता है कि विषयसुख की परितृप्ति के कारण ही पुत्रैषणा प्रबल होकर सामने नहीं आती है। युवावस्था स्वभावतः वर्तमान में सुखानुभूति की अवस्था है। वृद्धावस्था बहुधा भविष्य की ओर देखती है। युवावस्था की तुलना व्यापारी की उन घड़ियों से की जा सकती है जब वह स्फुर्तिपूर्वक तौलने और बेचने का कार्य करता है। वृद्धावस्था सायंकाल की वह बेला है जब व्यापारी हिसाब-किताब मिलाने बैठता है। दुकान समेटते हुए 'क्या पाया और क्या खोया' की मनोवृत्ति से वह संचालित होता है। महाराज श्री दशरथ का जीवन भी इस मनोभाव का अपवाद न था। वृद्धावस्था में उत्तराधिकारी की चिन्ता उन्हें व्याकुल बना देती है और वे श्रद्धालु शिष्य के रूप में गुरु वशिष्ठ का आश्रय लेते हैं। स्वयं गुरु वशिष्ठ अपनी और से युवावस्था में किसी

मनु और दशरथ चरित्र

प्रकार का हस्तक्षेप करते नहीं दीखाई देते। यों यदि वे चाहते तो महाराज श्री दशरथ का पहले भी इस विषय की और ध्यान आकृष्ट कर सकते थे। पर मानवीय मनोभाव के पण्डित होने के नाते वे यह भली-भांति जानते थे कि उचित अवसर पर ही किसी दिशा में ध्यान आकृष्ट करना फलदायी होता है। अतः जब महाराज के मन में स्वयं ग्लानि उत्पन्न होती है तब वे आश्वस्त करते हुए यज्ञ करने का आदेश देते हैं और माहाराज भी की कामना पूर्ण होती है।

पौराणिक गाथा

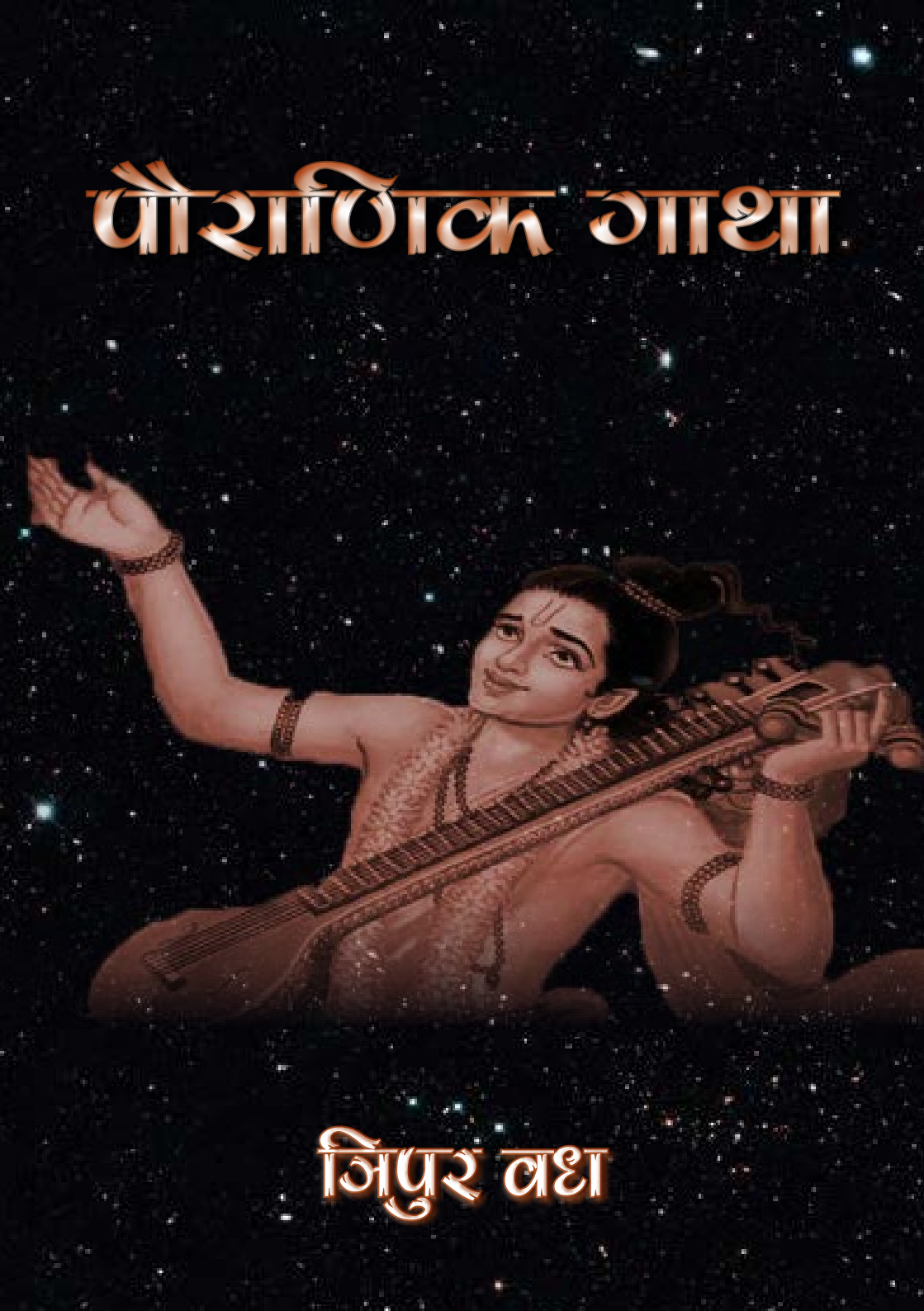

त्रिपुर वध

त्रिपुर वध

तारकासुर के तीन पुत्र थे, तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली। जब भगवान शिव के पुत्र कार्तिकेय ने तारकासुर का वध किया तो उसके पुत्रों को बहुत दुःख हुआ। उसका प्रतिशोध लेने के लिए घोर तपस्या करके ब्रह्माजी को प्रसन्न किया और एक विचित्र वरदान प्राप्त किया। जिसमें ब्रह्माजी से तीन नगरों का निर्माण करवाने को कहा, जो सतत अन्तरिक्ष में घूमते रहें। हजारो साल में एक बार हमारी नगरी एक रेखा में आएं और उस समय क्षणार्ध के लिए हम तीनों एक रेखा में हो, उस समय यदि किसी भी देवता ने उसका एक बाण से वेधन कर दिया तो हमारी मृत्यु होगी, अन्यथा पुनः हजारों वर्ष तक हम अन्तरिक्ष में घूमते रहेंगे।

ब्रह्माजी के आदेशानुसार मयदानव ने ऐसी तीन नगरी का निर्माण कर दिया, जिसमें एक स्वर्ण की, एक रजत की और एक लोहे की थी। तीनों उन एक एक नगरी मे वास करने लगे। समय बीतने पर वे अपने असुर स्वभाव में जीने लगें और तीनों लोक में आतंक

त्रिपुर वध

मचाने लगे। उनसे संतप्त होकर देवता, ऋषिमुनि आदि भगवान की शरण में गएं। तब महादेवजी ने उसके वध के लिए एक विशेष रथ की मांग करी।

इस रथ के पहिए सूर्य और चन्द्रमा हो, वरुण, यम, कुबेर आदि को रथ के घोडे बनना होगा। ब्रह्माजी रथ के सारथि बनें। सुमेरु पर्वत को धनुष बनना होगा, शेषनाग को उसकी प्रत्यंचा बनना होगा। और उस पर भगवान विष्णु का बाण चड़ाया जाएगा, तब ही हम उसका भेदन करेंगे।

भगवान के आदेशानुसार सब तैयार हो गए और ऐसे दिव्य रथ का निर्माण हो गया। उस दिव्यरथ पर सवार होकर महादेव जब त्रिपुरों का वध करने चलें तो दैत्यों में हाहाकार मच गया। दैत्यों देवताओं में युद्ध छिड़ गया। जैसे ही त्रिपुर एक सीधी रेखा में आए, भगवान शिव ने दिव्य बाण चलाकर उनका नाश कर दिया। त्रिपुरों का नाश होते ही सभी देवता महादेव की जय-जयकार करने लगें। त्रिपुरों का अन्त करने के कारण ही भगवान शिव त्रिपुरारि कहलाएं।

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

आश्रम / मिशन समाचार

गुरु पूर्णिमा उत्सव

आश्रम / मिशन समाचार

गुरु पादपूजा

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

श्री उर्वीश भाई एवं दीनाबेन पटेल

आश्रम / मिशन समाचार

पूज्य गुरुजी के आशीर्वचन

आश्रम / मिशन समाचार

आश्रम / मिशन समाचार

तस्मै श्री गुरवे नमः

आश्रम / मिशन समाचार

पूजामूलं गुरोः पादम्

आश्रम / मिशन समाचार

गुरु पूर्णिमा भण्डारा

आश्रम / मिशन समाचार

अधिकमास वेदान्त शिविर

आश्रम / मिशन समाचार

तत्त्वबोध का गहन अध्ययन

आश्रम / मिशन समाचार

तत्त्वबोधोऽभिधीयते

आश्रम / मिशन समाचार

संस्कृत कक्षा

आश्रम / मिशन समाचार

वेदपाठ

आश्रम / मिशन समाचार

श्रावणमास -गंगेश्वर महादेव झांकी

आश्रम / मिशन समाचार

श्रावण झूला

आश्रम / मिशन समाचार

सोमवती अमावस्या पूजन

आश्रम / मिशन समाचार

Birding In Bhopal

जन्माष्टमी शिविर

आवासीय शिविर

दि. 1 से 6 सितम्बर 2023

गीता अध्याय 4

ज्ञान कर्म संन्यास योग

(अवतार रहस्य)

ध्यान, पूजा/अभिषेक

श्लोकपाठ एवं प्रश्नोत्तर

पूज्य गुरुजी
(स्वामी आत्मानन्दजी)

जन्माष्टमी महोत्सव - 6 सितम्बर

प्रातः - शिविर समापन

सायं 8.30 बजे से जन्माष्टमी उत्सव

स्थानः वेदान्त आश्रम

सेक्टर-ई, 2948 सुदामा नगर, इन्दौर

www.vmission.org.in / vmission@gmail.com / 7000361938

आश्रम / मिशन समाचार

श्रीमद् भगवद् गीता
(शांकर भाष्य समेत) नित्य कक्षाएं

प्रतिदिन प्रातः 8.30 बजे से (मंगल से शनिवार)

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी

श्रीमद् भगवद् गीता
साप्ताहिक कक्षाएं / प्रति शनिवार

प्रति शनिवार सायं 5.00 बजे से

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य स्वामिनी अमितानन्दजी

Internet News

Talks on (by P. Guruji) :

Video Pravachans on YouTube Channel

~ Tattvabodha

~ Gita Ch. 06 (MIT)

~ Gita Ch. 12

~ Gita Ch. 17

~ Sadhna Panchakam

~ Drig-Drushya Vivek

~ Upadesh Saar

~ Atma Bodha Pravachan

~ Sundar Kand Pravachan

~ Prerak Kahaniya

~ Ekshloki Pravachan

~ Sampoorna Gita Pravachan

~ Kathopanishad Pravachan

~ Shiva Mahimna Pravachan

~ Hanuman Chalisa

~ Laghu Vakya Vrittu (Guj)

~ Gita Ch. 5 (Guj)

~ Gita Upodghat Bhashya (Guj)

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Monthly eZines

Vedanta Sandesh - Aug '23

Vedanta Piyush - July'23

Visit us online :
Vedanta Mission

Check out earlier issues of :
Vedanta Piyush

Join us on Facebook :
Vedanta & Dharma Shastra Group

Published by:
Vedanta Ashram, Indore

Editor:
Swamini Amitananda Saraswati